कहानी

अगले जनम मोहे बिटिया ही कीजो



बरामदे में बैठी दादी अपनी पुरानी संदूकची से एक गुलाबी रंग की छोटी-सी फ्रॉक निकालकर सहला रही थीं। उनकी आँखें बरसों पुराने किसी अधूरे सपने में डूबी थीं। तभी उनकी पोती अन्वी दौड़ती हुई आई और बोली, 'दादी, यह फ्रॉक किसकी है? मेरी तो नहीं है! ' दादी ने गहरी साँस ली। 'नहीं बिटिया... यह उस बेटी की है, जो कभी इस घर में आई ही नहीं।' अन्वी चौंक गई। 'आई ही नहीं? क्यों? ' दादी की आँखें भर आईं। 'तुम्हारे पापा के जन्म से पहले मेरी एक बेटी हुई थी। लेकिन समाज के तानों से और परिजनों से डरकर, रिश्तेदारों की बातों में आकर, मैंने उसे अपने मायके भेज दिया। वहाँ उसकी देखरेख ठीक से नहीं होने के कारण तबीयत बिगड़ी और वह मुझे छोड़कर चली गई। उस दिन के बाद मैं कभी चैन की नींद नहीं सोई। ' कहते कहते दादी की आवाज रूंध गई। अन्वी ने दादी का हाथ थाम लिया। 'दादी, आपने ऐसा क्यों किया? ' दादी का स्वर काँप उठा– 'क्योंकि तब लोग कहते थे–'बेटी पराया धन है, बेटा कुल का दीपक। घर में बेटा ही होना चाहिए। मैं भी वही मान बैठी। और अपने कलेजे के टुकड़े को दूसरों के भरोसे छोड़ दिया पर समय ने सिखा दिया कि दीपक तो बेटा भी हो सकता है और बेटी भी... फर्क केवल संस्कारों का होता है। ' इतने में बाहर से आवाज़ आई। 'माँ... दवा खा ली क्या? ' यह आवाज उनके बेटे की नहीं, बल्कि पड़ोस की उस लड़की की थी, जो रोज़ आकर उनकी सेवा करती थी। बेटा तो विदेश में था–महीनों से केवल बैंक खाते में पैसे भेज देता था। दादी की आँखों से आँसू बह निकले। उन्होंने अन्वी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा– 'बेटी, अगर ईश्वर सचमुच अगले जन्म का वरदान दे... तो मैं माँ नहीं बनना चाहूँगी... मैं स्वयं एक बेटी बनकर जन्म लेना चाहूँगी। ' अन्वी ने मासूमियत से पूछा, 'क्यों दादी? ' दादी ने आसमान की ओर देखते हुए धीमे स्वर में कहा– 'क्योंकि बेटी होना त्याग है, ममता है, करुणा है, सेवा है। बेटी जन्म नहीं लेती... वह हर घर में प्रेम का दूसरा नाम बनकर आती है। ' इतने में मंदिर से आरती की ध्वनि गूँज उठी। दादी ने दोनों हाथ जोड़ दिए। उनकी पलकों से गिरते आँसू जैसे वर्षों का पश्चाताप धो रहे थे। और उनके अधरों पर एक प्रार्थना थरथरा उठी– 'हे प्रभु! यदि पुनर्जन्म हो...तो अगले जनम मोहे बिटिया ही कीजो। ताकि मैं हर उस माँ की गोद महका सकूँ, जो बेटी को बोझ नहीं, ईश्वर का सबसे सुंदर उपहार समझे। ' संदेश बेटियाँ केवल परिवार का हिस्सा नहीं होतीं, वे परिवार की संवेदना, संस्कृति और संस्कारों की जीवित धरोहर होती हैं। जिस समाज में बेटी का सम्मान होता है, वहीं मानवता का भविष्य सुरक्षित रहता है।

सुनीता चौधरी ब्यावर राजस्थान

लड्डू खट्टे वाले



वह अमृतसर से पठानकोट की पैसेंजर ट्रेन पर सफर कर रहे थे। माहौल अच्छा था। वह आंखें बन्द करके मौबाईल में पुराने गाने धीमी आवाज में सुन रहे थे।अपने में मस्त। आंखें बन्द कर के संगीत में खोए हुए। तभी एक तेज आवाज - 'लड्डू गर्म.... खट्टे वाले... ' उसने उस की तरफ देखा । चने की दाल से बने हुए लड्डू की खुशबू अच्छी लग रही थी । ' कितने की ' 'बीस रुपए की ' 'एक मेरी भी लगा देना ' उस के हाथ तेजी से चल रहे थे । पेपर प्लेट में दो लड्डू के साथ मसाले वाली गाजर और उपर से पुदिने की चटनी और चाट मसाला .... खट्टा पुछ कर डाल रहा था। एक दूसरे को देख कर लोग आर्डर दे रहे थे। उस के सामने वाली सीट पर पति पत्नी अपने दो बच्चों के साथ बैठे थे बहुत तैयार हुयें । बच्चों ने पहले मां की तरफ देखा मां ने इशारे से कहा पापा को कहो... बच्चे पापा के बाजू को झकझोर कर - 'पापा.... ' 'खाना है ...' पापा ने पूछा तो बच्चों ने सिर हिला दिया ' अरे भाई .. इन को भी दो.... ' पहले के हाथ में प्लेट ... फिर दूसरे के हाथ में भी ... उनके मम्मी के चेहरे से लग रहा था वह भी खाना चाहती है । पतले लम्बे चेहरे पर छोटे छोटे होंठों पर लगी लिपिस्टिक... होंठों और आखों की भिराव साफ बता रही थी कि उसका मन भी खाने को है । बच्चे मजे से अपनी अपनी प्लेट में खा रहे हैं ..अपने हिस्से को एक दूसरे से बचाते हुए ... लड्डू वाले ने फिर आवाज दी ... लड्डू गर्म... और अपने थाल को उठाने ही वाला था तो पति की आवाज ने उसे फिर से रोक दिया ...। ' भाई एक प्लेट और लगा दो ... ' उस का ध्यान लड्डू वाले के हाथों की तेजी पर लगा था ..। ' अरे गाजर थोड़ी ओर डाल ... हां खट्टा भी डाल देना ...। प्लेट पकड़ कर ...' थोड़ा मसाला भी डाल ...। ' फिर मजे से खाने लगा ... बिना पत्नी की तरफ देखे ..। लड्डू वाला आगे चला गया ... पत्नी चुपचाप देखती रह गई ...। उसके चेहरे पर आई उदासी साफ दिखाई दे रही थी । ' खाओ गी.... ' उसका चेहरा खिल उठा .. चेहरे पर लालिमा स्पष्ट झलक रही थी । पति ने अपनी ही बची हुई प्लेट उसकी तरफ बढ़ा दी ।वह उत्साह से उसी को खाने लगी। उस बची प्लेट में ज्यादातर गाजर ही था लड्डू का थोड़ा सा चूरा ही बचा था। पर उसके चेहरे से ऐसा लग रहा था जैसे वह उसी से तृप्त हो गई हो।

रमेश कुमार संतोष
मो. 9876750370

रोटी

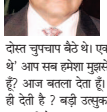

रामेश्वर ने पत्नी के स्वर्ग वास हो जाने के बाद अपने दोस्तों के साथ सुबह शाम पार्क में टहलना और गपें यू मारना, पास के मंदर में दर्शन करने को अपनी दिनचर्या बना लिया था। हालाकि घर में उन्हें किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं थी। सभी उनका बहुत ध्यान रखते थे, लेकिन आज सभी दोस्त चुपचाप बैठे थे। एक दोस्त को वृद्धाश्रम भेजने की बात से सभी दुःखी थे' आप सब हमेशा मुझसे पूछते थे कि मैं भगवान से तीसरी रोटी क्यों माँगता हूँ? आज बतला देता हूँ। कमल ने पूछा 'क्या बहू तुम्हें सिर्फ तीन रोटी ही देती है ? बड़ी उत्सुकता से एक दोस्त ने पूछा? 'नहीं यार! ऐसी कोई बात नहीं है, बहू बहुत अच्छी है। असल में 'रोटी, चार प्रकार की होती है। ' पहली 'सबसे स्वादिष्ट' रोटी 'माँ की 'ममता' और 'वात्सल्य' से भरी हुई। जिससे पेट तो भर जाता है, पर मन कभी नहीं भरता। एक दोस्त ने कहा, सोलह आने सच, पर शादी के बाद माँ की रोटी कम ही मिलती है।' उन्होंने आगे कहा 'हाँ, वही तो बात है। दूसरी रोटी पत्नी की होती है जिसमें अपनापन और 'समर्पण' भाव होता है जिससे 'पेट' और 'मन' दोनों भर जाते हैं। ', क्या बात कही है यार ?' ऐसा तो हमने कभी सोचा ही नहीं। फिर तीसरी रोटी किस की होती है?' एक दोस्त ने सवाल किया। तीसरी रोटी बहू की होती है जिसमें सिर्फ 'कर्तव्य' का भाव होता है जो कुछ कुछ स्वाद भी देती है और पेट भी भर देती है और वृद्धाश्रम की परेशानियों से भी बचाती है ', थोड़ी देर के लिए वहाँ चुप्पी छा गई। लेकिन ये चौथी रोटी कौन सी होती है ?' मौन तोड़ते हुए एक दोस्त ने पूछा- चौथी रोटी नौकरानी की होती है। जिससे ना तो इन्सान का 'पेट' भरता है न ही 'मन' तृप्त होता है और 'स्वाद' की तो कोई गारंटी ही नहीं है ', तो फिर हमें क्या करना चाहिये यार ? माँ की हमेशा पूजा करो, पत्नी को सबसे अच्छा दोस्त बना कर जीवन जिओ, बहू को अपनी बेटी समझो और छोटी मोटी ग़लतियाँ नज़रन्दाज़ कर दो बहू खुश रहेगी तो बेटा भी आपका ध्यान रखेगा। यदि हालात चौथी रोटी तक ले ही आयें तो भगवान का शुकर करो कि उसने हमें जिन्दा रखा हुआ है, अब स्वाद पर ध्यान मत दो केवल जीने के लिये बहुत कम खाओ ताकि आराम से बुढ़ापा कट जाये, बड़ी खामोशी से सब दोस्त सोच रहे थे कि वाकई, हम कितने खुशकिस्मत हैं....

संकलन, रमेश चौपड़ा सौभाग्य
20 बी बिल्डर्स कॉलोनी इंदौर 452003

कहानी

बरामदे की चाय

अनुराग सागर पहुँचा तो साँझ हो चुकी थी। बंगलौर से भोपाल, भोपाल से बस, और फिर बस-अड्डे से रिक्शा। पूरे रास्ते उसका फ़ोन कान से लगा रहा। पहले ऑफ़िस वालों से, फिर नेहा से - जो बात करने के नाम पर बस 'हाँ, ठीक है' कहती रही - और फिर किसी क्लाइंट से जिसने ऐन छुट्टी के दिन भी चैन नहीं लेने दिया। जब रिक्शा गली के मोड़ पर मुड़ा और आँगन का पुराना नीम दिखा, तो उसने फ़ोन जेब में डाला और पहली बार लगा कि वह कई घंटे से लगातार बोल रहा था। बाबूजी बरामदे में थे। मास्टर रघुनाथ प्रसाद, प्राथमिक शाला से रिटायर हुए पंद्रह बरस हो गए। बेंत की कुर्सी पर बैठे थे, गोद में तश्तरी में रखा एक अमरूद और छोटा चाकू। अम्मा सामने तख़्त पर बैठी चावल बीन रही थीं। 'आ गया,' अम्मा ने कहा। बस इतना। 'आ गया,' बाबूजी ने भी कहा, और अमरूद की एक फाँक काटकर तश्तरी में रखी। अनुराग को पहले लगा कि शायद वे उसके आने से ख़ुश नहीं हैं। फिर याद आया कि हर बार ऐसा ही होता था। उसने चरण छुए, बैग भीतर रखा, धोकर लौटा, तो बरामदे में एक तीसरी कुर्सी लग चुकी थी। उसने थाना नहीं दिया था कि किसने लगाई। चाय आई। अम्मा लेकर आईं तीन कप, और बाबूजी का कप उन्होंने बिना पूछे उनके दाएँ हाथ की तरफ़ रखा, जिधर वे हमेशा रखते थे, और बाबूजी ने बिना देखे उठा लिया। अनुराग ने चाय पी। फिर बोला, 'बाबूजी, यहाँ फ़ोन का नेटवर्क अब भी ख़राब है क्या? मुझे एक मेल भेजनी थी। ' 'हां, है,' बाबूजी ने कहा। फिर चुप्पी। झींगुर बोलने लगे थे। दूर कहीं कुकर की सीटी बजी, और किसी बच्चे की पुकार। अनुराग ने कुर्सी पर पहलू बदला। उसे लगा कि इस चुप्पी में कुछ कहना ज़रूरी है, जैसे कोई घर में जाकर बत्ती जला देता है। 'आप लोग... आप दोनों बात क्यों नहीं करते?' उसने आख़िर पूछ ही लिया- 'मतलब, आपस में। मैं इतनी देर से देख रहा हूँ - मतलब, पिछली बार भी देखा था – आप दोनों दिन-दिन भर एक शब्द भी नहीं बोलते। सब ठीक तो है न? ' अम्मा ने चावल की थाली से सिर उठाया। बाबूजी ने अमरूद की दूसरी फाँक काटी। 'बात?' अम्मा ने कहा। उनके चेहरे पर कोई ग़ुस्सा नहीं था, बस थोड़ी उलझन, जैसे किसी ने पूछा हो कि वे साँस कब लेती हैं। 'बात तो बहुत की थी, बेटा।





पहले दस-बारह बरस तक रात-रात भर। तेरे बाबूजी तब बहुत बोलते थे। ' 'अच्छा ? ' 'बहुत,' बाबूजी ने कहा, पहली बार हल्के से मुस्कुराते हुए। 'तेरी अम्मा चुप रहती थीं और मैं बोलता था। मुझे लगता था कि चुप रहने वाला आदमी कुछ छुपा रहा है। ' 'और अब? ' 'अब,' अम्मा ने कहा, 'अब कहने को बचा ही क्या है जो इन्हें पता न हो और जो इन्हें पता है, वह मुझे कहना नहीं पड़ता।' यह कहकर उन्होंने तश्तरी से अमरूद की फाँक उठाई और खाई। बाबूजी ने उनकी ओर देखा तक नहीं। पर उन्होंने तश्तरी हल्के से अम्मा की ओर खिसका दी थी, जैसे कोई चीज़ जो सदा से वहीं होनी चाहिए। अनुराग ने यह देखा। उसने सोचा कि पिछले एक साल में उसके और नेहा के बीच कितनी चुप्पियाँ आई थीं। नाश्ते की मेज़ पर, गाड़ी में, सोने से पहले। पर उन चुप्पियों में एक अजीब वज़न था, वह उन्हें भरना चाहता था - मौसम की बात से, ऑफ़िस के क़िस्से से, फ़ोन की स्क्रीन से - और फिर भी वे भारी बनी रहतीं, जैसे कमरे में कोई तीसरा आदमी हो जो दोनों से कह रहा हो कि तुम एक-दूसरे से कुछ छुपा रहे हो। और यहाँ यह चुप्पी - अम्मा और बाबूजी की - हल्की थी। उसे इसका कोई सबूत नहीं देना था, कोई अर्थ भी नहीं, पर वह जैसे हवा में तैर रही थी। अनुराग को लगा कि यह वही चीज़ है जो उसे अपने ही घर में कभी महसूस नहीं हुई, और वह चुपचाप इसे अपने भीतर कहीं रख रहा है। 'बेटा,' बाबूजी ने कहा। 'जी? ' 'तू भी चुप रहकर देख। पाँच मिनट। ' अनुराग हँस पड़ा। फिर रुका। फ़ोन उसने मेज़ पर उल्टा रख दिया था और उसकी स्क्रीन पर कोई सूचना काँधी थी, जिसे उसने नहीं देखा। उसने आँखें बंद कीं, जैसे बचपन में कहानी सुनते वक़्त करता था। पहले उसे पंखे की आवाज़ सुनाई दी, जो उसने पूरे तीन दिन में एक बार भी नहीं सुनी थी। फिर कहीं दूर रेल की सीटी, फिर आँगन में नीम के पत्तों की खरखराहट। फिर बाबूजी की साँस, धीमी और गहरी। फिर अम्मा के चावल बीनने की टक-टक, जो असल में कोई लय थी। और उन सबके बीच, जैसे सबको थामे हुए, कुछ और - जिसका कोई नाम नहीं था, जो शायद सिर्फ़ यह था कि वह इस घर में है, इन दो लोगों के पास है, और उसे कुछ नहीं करना है। पाँच मिनट बीते या पचास, उसे पता नहीं चला। जब उसने आँखें खोलीं तो अम्मा की थाली खाली थी और बाबूजी अमरूद का आख़िरी टुकड़ा उसकी ओर बढ़ा रहे थे। 'खा ले,' उन्होंने कहा। उसने ले लिया। रात को सोने से पहले उसने नेहा को फ़ोन नहीं किया। एक संदेश भेजा - बस तीन शब्द: 'कल बात करेंगे।' पर संदेश भेजते हुए उसे पहली बार लगा कि इसके पीछे कोई बचाव नहीं है। वह सचमुच चाहता था कि कल बात हो, और आज रात की चुप्पी भी रहे, दोनों। बरामदे में बाबूजी की कुर्सी खाली थी। उसके बग़ल में अम्मा की चाय का कप आधा भरा रखा था, और उसके ऊपर रखी थी एक छोटी तश्तरी, ताकि ठंडी न हो।

रविकान्त राऊत
जबलपुर,मध्यप्रदेश
9425611243

आठ वर्षीय अलगावी योजना



अब शादी के कार्ड पर सिर्फ तारीख, समय और जगह ही नहीं लिखी होगी। सबसे आखिर में लिखा होगा, अनिवार्य सूचना : साथ रहने की सरकारी अवधि आठ वर्ष। आठ साल पूरे होते ही शादी की अवधि स्वतः समाप्त और शुरू हो जाएगी अलगावी योजना। इसके लिए सबसे पहले जरूरी है, कानून बनाओ! मानव जाति चलती रहे, इसलिए शादी जरुरी है। लेकिन थोड़े सालों में शादी का भूत उतर जाता है और अलग होने की इच्छा सबकी होती है, पर बच्चे, रिश्तेदार और समाज का डर रोक रखता है। कानून बन गया तो अलग होने के लिए कोई वजह नहीं चाहिए, बस आठ साल का इंतजार, उसके बाद जियो और जीने दो! और अगर आठ साल बाद भी साथ रहना हो तो सरकार से अनुमति लेनी पड़े। ऐसी लंबी चौड़ी कानूनी प्रक्रिया, इतने कागज, इतनी फीस और इतने नियम हों कि आदमी सोचे, इससे तो अलगावी ही ठीक है! देखो, शादी वैसे भी फुल टाइम मैनेजमेंट प्रोजेक्ट है। दो लोग और पसंद दो सौ! किसी को ठंड लगती है, किसी को गर्मी; किसी को सीरियल चाहिए, किसी को क्रिकेट! एक को नींद, दूसरे को मोबाइल; एक के खर्राटे, दूसरे की नींद हराम! फिर अलग घर, अलग टीवी, अलग सामान। सब अपनी-अपनी मर्जी के मालिक, देश में शांति! शादी के बाद घर में 24 घंटे का करटमर केयर सेंटर खुल जाता है। सबकी छोटी-मोटी जरूरतों का ध्यान रखो। ऊपर से हिसाब अलग लगाते हैं, 'मैंने तुम्हारे लिए इतना किया, तुमने मेरे लिए क्या किया?' शादी है या सालाना ऑडिट? अलगावी के बाद न किसी का हिसाब, न किसी की जवाबदेही। अपना कमाओ, अपना खाओ, अपने घर का काम निपटाओ और मजे से रहो! जब बार-बार सुनना है कि 'तुम्हारे में अक्ल नहीं है', तो फिर ऐसे बिना अक्ल वाले के साथ क्यों जीना?

आठ साल में अलग होना ही है, तो पति-पत्नी झगड़ेंगे भी कम! सास, बहू, ननद, भौजाई, देवरानी, जेठानी और बाकी रिश्तेदार भी सोचेंगे, आठ साल की ही तो बात है, इसके लिए जीवनभर के रिश्ते क्यों खराब करें! यह कारनामा भी हमारा ही है। पहले समाज बनाया, फिर शादी बनाई और फिर जीवनभर साथ रहने की पत्थर की लकीर खींच दी। भगवान ने तो ऐसा कोई नियम नहीं बनाया था। दूसरे जीवों को देखिए, कितनी मस्ती से अपनी जिंदगी जी रहे हैं! बच्चों को भी दो घर मिल जाएँगे। दो बच्चे पैदा करो, एक माँ के पास, एक बाप के पास। पति-पत्नी एक-दूसरे के घर मेहमान बनकर जा सकते हैं, बस वीजा जैसी अनुमति लेनी पड़ेगी! बुढ़ापे का क्या? लोग कहते हैं कि बुढ़ापे में एक-दूसरे की जरूरत पड़ेगी। उसकी भी चिंता सरकार करे। कानून के साथ बुढ़ापे की सरकारी व्यवस्था भी होनी चाहिए। आखिर अलगावी योजना है तो पूरी योजना हो! और जिनकी शादी को आठ साल से ऊपर हो चुके हैं, उन्हें हर अतिरिक्त साल का देरी भत्ता भी मिलना चाहिए! देखना, छोटी-मोटी पार्टियाँ नहीं, शादी से भी बड़े-बड़े अलगावी रिसेप्शन होंगे। फिर लोग तुलना करेंगे, 'अरे, उसने तो क्या शानदार अलगावी रिसेप्शन दिया! ' एक निमंत्रण, एक मेहमान, देश का बजट बचेगा! बस कानून बनाओ, दिन गिनो और अलगावी के जश्न की तैयारी करो! (वैसे, आठ साल ही क्यों??? सोचो-सोचो!)

सादर धन्यवाद।
नीपा नयन

विश्राम



'माँ! बहुत जोरों की भूख लगी है। '

सीमा ने घर में दाखिल होते ही अपना बैग मेज़ पर रखा और सीधे बाथरूम में चली गई। हाथ-मुँह धोकर बाहर निकली तो माँ नाश्ते की प्लेट लेकर उसके सामने खड़ी थी। वह नाश्ता करने लगी और माँ उसके लिए चाय बनाने रसोई में चली गई। नाश्ता और चाय खत्म होते ही सीमा अपने कमरे में जाकर आराम करने लगी। करीब आधे घंटे बाद उसका भाई शिवम घर लौटा।

'माँ! कुछ खाने को दो न, बहुत भूख लगी है। '

माँ ने तुरंत रसोई की ओर रुख किया और नाश्ते की प्लेट उसके सामने रख दी। शिवम ने इत्मीनान से नाश्ता किया, गर्मागर्म चाय पी और फिर अपने कमरे में आराम करने चला गया। इसके ठीक आधे घंटे बाद शिवम की पत्नी सुरभि घर पहुँची। उसे देखते ही माँ निश्चिंत होकर अपने पसंदीदा धारावाहिक का आनंद लेने के लिए टेलीविजन के सामने जा बैठी।

सुरभि ने किसी से कुछ नहीं कहा। चुपचाप अपना बैग सोफे पर रखा और बाथरूम में चली गई। हाथ-मुँह धोकर जब वह बाहर निकली तो उसके चेहरे पर दिनभर की थकान साफ झलक रही थी।

सीमा, शिवम और सुरभि, तीनों नौकरीपेशा थे। लेकिन घर लौटने के बाद सबकी थकान का अर्थ अलग-अलग था।

सुरभि सीधे रसोई में पहुँची। दिनभर के जूठे बर्तन सिंक में पड़े उसका इंतजार कर रहे थे। उसने एक नजर उन पर डाली, फिर थके हुए हाथों से सिर में थोड़ा-सा बाम लगाया। मन तो एक कप गर्म चाय पीकर कुछ देर सुस्ताने का था, लेकिन उस इच्छा को मन के किसी कोने में दबाकर वह काम में जुट गई।

रसोई में बर्तनों की खनखनाहट गूँजने लगी और बैठक में टेलीविजन का शोर। घर के बाकी लोगों को उनका विश्राम मिल चुका था, बस सुरभि के हिस्से का विश्राम अभी बाकी था।

रंजना लता, समस्तीपुर
9835838926

बिटिया की शादी

घर में शादी की तैयारियाँ कई दिनों से चल रही थीं। पिता ने अपनी जिंदगी भर की जमा-पूँजी लगा दी थी। माँ ने अपनी बेटी के लिए कितने अरमानों से कपड़े,गहने और घर का सामान तैयार किया था। घर के बाहर सजावट थी,आँगन में मंडप सजा था, रिश्तेदारों की भीड़ थी और बेटी दुल्हन बनकर अपने नए जीवन के सपने देख रही थी। शादी तय हुई थी तो लड़के वालों ने कुछ पैसों की मांग रखी थी। लड़की के पिता ने अपनी हैसियत के हिसाब से सब कुछ मान लिया था। उन्हें लगा था कि अब उनकी बेटी की शादी अच्छे से हो जाएगी। लेकिन शादी वाले दिन अचानक लड़के वालों की तरफ से एक नई मांग आ गई। लड़के वालों ने कहा,हमें दो पहिया गाड़ी चाहिए। बिना गाड़ी के हमारा लड़का शादी नहीं करेगा। लड़की के पिता के पैरों तले जमीन खिसक गई। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा, भाई साहब,हमने पहले ही अपनी हैसियत से ज्यादा खर्च कर दिया है। अभी हमारे पास इतने पैसे नहीं हैं। आप शादी होने दीजिए,हम धीरे-धीरे करके गाड़ी का इंतजाम कर देंगे। मेरी बेटी को अपने घर ले जाइए। लेकिन लड़के वाले अपनी जिद पर अड़े रहे। लड़की की माँ भी रोते हुए उनके सामने हाथ जोड़ने लगी। कहने लगी भाई साहब,मेरी बेटी को इस रिश्ते से मत छीनिए। हमने अपनी तरफ से कोई कमी नहीं रखी। जितना बन पड़ा,सब किया। अब हमारे पास कुछ नहीं बचा। लेकिन उन लोगों का दिल नहीं पसीजा। लड़के ने भी साफ कह दिया कि उसे गाड़ी चाहिए,वरना वह शादी नहीं करेगा और फिर देखते ही देखते जिस घर में शहनाइयाँ बज रही थीं,वहाँ रोने की आवाजें गूँजने लगीं। बारात वापस जाने लगी। उस पिता पर क्या बीती होगी, जिसने अपनी बेटी की दुल्हन बनाने के लिए अपनी पूरी जिंदगी की कमाई लगा दी थी। वह दरवाजे पर खड़ा बस बारात को जाते हुए देख रहा था। उसकी आँखों में एक ही सवाल था कि अब अपनी बेटी को क्या जवाब दूँगा ? माँ का तो बुरा हाल था। वह कभी बेटी के पास जाती,कभी दरवाजे की तरफ देखती बार-बार बेटी के सिर पर हाथ फेरकर रोने लगती और दुल्हन ? वह मंडप में चुपचाप बैठी थी। लाल जोड़े में सजी हुई,हाथों में मेहंदी लगाए,आँखों में आँसू लिए। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि अभी कुछ देर पहले जो लोग उसके अपने बनने वाले थे,वो अचानक उसे इस तरह छोड़कर कैसे चले गए। उसकी नजर कभी सजे हुए मंडप पर जाती,कभी दरवाजे पर और कभी अपने माता-पिता पर। जिस शादी के सपने उसने बचपन से देखे थे,उसी शादी के दिन उसे यह एहसास करा दिया गया कि उसकी कीमत दोपहिया गाड़ी से भी कम समझी गई। जिस लड़के ने बारात वापस ले जाने का फैसला किया था,उसका एक छोटा भाई भी था। वह पढ़ा-लिखा और समझदार था। अपने बड़े भाई की इस हरकत से वह बेहद शर्मिंदा था। उसने परिवार वालों से कहा,आज आपने सिर्फ एक लड़की की शादी नहीं रोकी है,आपने एक पिता की इज्जत और एक बेटी के सपनों को सबके सामने तोड़ दिया है। आखिर उस लड़की का क्या कसूर है ? कुछ समय बाद उस छोटे भाई ने उस लड़की से शादी करने की इच्छा जताई। उसने लड़की और उसके परिवार के सामने साफ कहा कि वह यह फैसला किसी पर एहसान करने के लिए नहीं ले रहा,बल्कि वह



लड़की को अपनी जीवनसाथी के रूप में सम्मान देना चाहता है। शुरुआत में लड़की के परिवार को बहुत डर लगा। उन्हें लगा कि जिस घर से एक बार बेटी की बारात लौट चुकी है,उसी घर में दोबारा बेटी को कैसे भेजें ? लेकिन उस लड़के ने भरोसा दिलाया कि वह अपनी पत्नी का सम्मान करेगा और कभी उसे किसी के सामने झुकने नहीं देगा। आखिरकार दोनों की शादी हो गई। लड़की दोबारा उसी घर में दुल्हन बनकर आई, जहाँ से कुछ समय पहले उसकी बारात लौटाई गई थी। लेकिन इस बार भी उसका स्वागत फूलों और मुस्कुराहटों से नहीं हुआ। घर के कुछ लोग उससे नाराज थे। कोई उससे बात नहीं करता,कोई ताने देता। यहाँ तक कि घर में प्रवेश और रहने को लेकर भी विवाद खड़ा कर दिया गया। घर के लोग कहने लगे,तुम्हें इस घर में रहने का कोई हक नहीं है। लेकिन उस लड़के ने भी उस घर को बनाने में अपना आधा पैसा लगाया था। वह पढ़ा-लिखा था और अपने अधिकारों को समझता था। जब परिवार ने उन्हें घर में रहने से रोकने की कोशिश की,तो उसने कानूनी रास्ता अपनाया और पुलिस की मदद से अपने वैवाहिक घर में रहने के अधिकार के लिए कदम उठाए। आखिरकार वह अपनी पत्नी को लेकर घर के ऊपर वाले फ्लोर पर रहने लगा। शुरुआत में दोनों के साथ कोई ठीक से बात नहीं करता था। घर में सब लोग मौजूद होते, लेकिन उनके लिए जैसे कोई जगह ही नहीं थी और सबसे मुश्किल बात यह थी कि उसी घर में उसका बड़ा भाई भी रहता था,जिसकी बारात कभी उस लड़की को छोड़कर वापस चली गई थी।

सोचिए, उस लड़की के लिए एक ही छत के नीचे रहना कितना मुश्किल रहा होगा। कभी सामने वही चेहरा आ जाता, जिसने उसकी जिंदगी के सबसे खूबसूरत दिन को सबसे दर्दनाक दिन बना दिया था। लेकिन उसका पति हर बार उसके साथ खड़ा रहता। जब भी कोई उसकी पत्नी को कुछ कहता, वह तुरंत सामने आ जाता और कहता,जो भी बात करनी है,मुझसे कीजिए। मेरी पत्नी से कोई बदतमीजी नहीं करेगा। उसने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा है। वह अपनी पत्नी से कहता,तुम्हें किसी के सामने अपनी सफाई देने की जरूरत नहीं है। तुम मेरी पत्नी हो और इस घर में तुम्हारी भी उतनी ही इज्जत है जितनी मेरी। धीरे-धीरे उस लड़की ने भी खुद को संभालना शुरू किया। उसे समझ आया कि जिंदगी में हर रिश्ता खून का नहीं होता, कुछ रिश्ते इंसान अपने व्यवहार और हिम्मत से बनाता है। जिस घर में कभी उसे दहेज के लिए ठुकराया गया था,उसी घर में आज वह अपने पति के साथ सिर उठाकर रह रही थी। लेकिन छोटे भाई ने उसी लड़की को अपनी जिंदगी का हिस्सा बनाकर बता दिया कि असली मर्दानगी दहेज लेने में नहीं, बल्कि अपनी पत्नी को सम्मान और सुरक्षा देने में है। उसे छोटे भाई जैसे लड़के को समाज में सम्मान नहीं मिलना चाहिए,जिसने अपने परिवार के गलत फैसले के सामने झुकने के बजाय एक लड़की का साथ दिया ?

प्रेमनारायण वेद , इंदौर

पीछे की बेंच पर इश्क की पाठशाला

व्यंग्य

एक जमाना था जब लैला और मजनू की कहानियां इतिहास के पन्नों या फिल्मों तक सीमित थीं। उस दौर में प्रेम एक साधना थी। आज यह साधना स्कूल और कॉलेज की दीवारों पर उगने वाली खरपतवार बन गई है। फिल्मों और मोबाइल ने नई पीढ़ी के दिमाग में ऐसा भूसा भर है कि हर स्कूल-कालेज और गली में एक नहीं कई मजनू घूम रहे हैं। हर मोड़ पर एक लैला कैमरे में मुंह बिचकाती नजर आती है। जिस उम्र में हाथों में किताबें होनी चाहिए, उस उम्र में आशिकी और महंगा नशा का लुप्त उठा रहे हैं। पढ़ाई की उम्र में इश्क का यह बुखार अब बच्चों के भविष्य की चिंता सजा रहा है।

आजकल स्कूल और कॉलेज शिक्षा के मंदिर कम और प्रेम रोगियों के अड्डे ज्यादा बन गए हैं। मां-बाप पेट काटकर बच्चों को पढ़ने भेजते हैं। वे सोचते हैं कि बच्चे पढ़-लिखकर उनका सहारा बनेंगे। लेकिन यहां तो आलम ही निराला है। कक्षा में गुरुजी गणित के सूत्र समझा रहे होते हैं। उधर पीछे की बेंच पर बैठे मजनू साहब अपनी लैला के साथ शाम को मिलने की योजना बनाते हैं। इन्हें देश के इतिहास और भूगोल से कोई मतलब नहीं है। इनका पूरा भूगोल बस दो कदम दूर बैठी मित्र के इर्द-गिर्द सिमट गया है। किताबों के पन्नों से ज्यादा दिलचस्पी अब सामने वाली बेंच की मुस्कान में सिमट कर रह गई है।

इस नई संस्कृति ने बच्चों को बुरी तरह भ्रमित कर दिया है। उन्हें माता-पिता का त्याग और समाज की मर्यादाएं अब बोझ लगती हैं। घर में बड़े अगर पढ़ाई के लिए टोक दें, तो ये खुद को किसी फिल्म का बागी नायक समझने लगते हैं। परिवार से दूरियां बढ़ती जा रही हैं। आभासी दुनिया के कच्चे रिश्ते असली खून के रिश्तों पर भारी पड़ रहे हैं। विडंबना देखिए कि जिन्हें अभी ठीक से अपनी नाक पोंछने का सलीका नहीं आया, वे सात जन्मों तक साथ निभाने की कसमें खा रहे हैं। मां-बाप की जीवन भर की तपस्या आजकल दो दिन की मीठी बातों के आगे हारती नजर आ रही है।

फिल्मों की चमक-दमक में आकर ये युवा गलत रास्तों की ओर बढ़ रहे हैं। जेब में फूटी कौड़ी नहीं होती, फिर भी साथी को खुश करने की होड़ लगी है। इसके लिए घर से झूठ बोलकर पैसे ऐंठे जाते हैं। कई बार यह दिखावा अपराध की गलियों तक भी ले जाता है। जब परीक्षा का परिणाम आता है और भविष्य अंधकार में डूबता है, तब इस नशे का बुखार उतरता है। लेकिन तब तक समय की रेत हाथ से फिसल चुकी होती है। उधार के पैसों से खरीदे गए उपहार अक्सर जीवन भर के लिए बेरोजगारी का प्रमाण पत्र थमा जाते हैं। इस आधुनिक लैला-मजनू को समझना होगा कि खाली पेट प्रेम के गीत नहीं गाए जा सकते। यदि समय रहते किताबों से दोस्ती नहीं की गई, तो कल यही समाज इनसे इनकी पहचान छीन लेगा। याद रखिए कि सफलता की सीढ़ी चढ़ने के लिए मजबूत इरादों की जरूरत होती है, न कि किसी झूठे प्रेम के सहारे की।

- सूर्यदीप कुशवाहा